वेद ज्ञान का सूर्य उगा है फैल रहा वैदिक विज्ञान।
टिक न सकेगा आज विश्व में गुरुडमवादी मिथ्या ज्ञान।।

सत्यनारायण कथा समीक्षा

—कविराज पं० छाजूराम 'शान्त' आर्य महोपदेशक

सनातनधर्मियों (वर्तमान पौराणिक लोगों) के प्रत्येक व्रत, पर्व तथा कर्मकाण्ड आदि धार्मिक कृत्य पुराणों पर आधारित हैं। उनके समस्त क्रियाकलापों से अन्धविश्वास एवं रूढ़िवादिता प्रकट होती है। उन कृत्यों में एक सत्यनारायण की कथा भी है। जो स्कन्दपुराण में से लिखी हुई बताते हैं। यह कथा तो नहीं है और न इसमें व्रत का सही वेदोक्त विधान है। यह केवल माहात्म्य है कि अमुक व्यक्ति ने कथा सुनी तो उसे स्वर्ग वा मुक्ति मिली। अमुक ने न सुनी तो उसे नर्क वा कष्ट मिला। इस कथा को सुनते-सुनते सैंकड़ों वर्ष व्यतीत हो गये। किन्तु बुद्धि के अन्धे और गाँठ के पूरे किसी भी यजमान ने अपने पुरोहित से यह पूछने का आज तक साहस नहीं किया कि इसमें लिखित लीलावती, कलावती तथा अन्य वे व्यक्ति जो सत्यनारायण कथा सुन कर दुःखों से तर गये, धनवान् वा पुत्रवान् बन गये तो उन्होंने कौन सी कथा पुरोहित जी से सुनी थी ! उसी कथा को आप हमें सुनाइये, ताकि हम भी दुःखों से तर जायें। यदि आपसे कोई कहे कि अमुक ग्राम के किसानों ने अपने परिश्रम तथा नये ढंग से १० वा १५ मन बीघे का अनाज उत्पन्न किया। तब यह सुन कर आप अवश्य ही यह पूछना चाहेंगे कि वही खेती का ढंग हमें भी बताइये। तब उसे बताना चाहिये। इसी प्रश्न का उत्तर कथा के विषय में पौराणिक कर्मकाण्डियों को बुद्धि संगत और सप्रमाण देना चाहिये। सो हमारे पूछने पर आज तक किसी भी पंडित ने सन्तोषप्रद उत्तर नहीं दिया और न वे दे सकते हैं। क्योंकि खोटा सिक्का कसौटी पर खरा उतरता ही नहीं है।

पाठक इससे यह न समझें कि हमें सत्यनारायण कथा से विरोध वा घृणा है। धर्म मार्ग पर चलने के लिये आज जनता में भगवतकथा की प्रथा अवश्य चालू रहनी चाहिये। हम स्वयं सत्यनारायण की कथा श्रद्धालु भक्तों को सुनाते हैं। विद्वानों

का कर्तव्य ही है कि जनता का पथ-प्रदर्शन करते रहें। परन्तु हमें दुःख है कि जिस कथा के श्रवण-मनन एवं आचरण से दुःखी जन तर जाते हैं, वह कथा पौराणिक पुरोहितों ने सुनाई ही नहीं। कारण, कि अल्पशिक्षित पुरोहित तो जानते नहीं और जो बड़े-बड़े संस्कृतज्ञ व्याकरणाचार्य पंडित हैं, जो वर्तमान कथा के मिथ्यात्व को भली-भाँति समझते हैं, वे स्वार्थवश इसी कथा को चालू रखना चाहते हैं। जनता में अपनी पूजा प्रतिष्ठा तथा धन का लालच उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य करता है साधारण पंडितों का तो फिर कहना ही क्या। उनके ऊपर 'अन्धेनैवनीयमानायथान्धाः' वाली उक्ति चरितार्थ हो रही है। एक अन्धा दूसरे अन्धे को क्या मार्ग बतायेगा!

वर्तमान चालू कथा कब से चली, किसने चलाई? वास्तविक सत्यनारायण कथा कौन सी है? इत्यादि सभी बातों का युक्तिपूर्वक उत्तर पढ़ कर आप विचार करें कि अवतारवाद की ओट में किस प्रकार शिकार खेला गया है और भोली प्रजा को कर्तव्यमार्ग से लाखों कोस दूर फेंक कर उसे गुमराह किया गया है। यह समस्त कथा ही काल्पनिक, असत्य पर आधारित तथा पैसा बटोरने का धन्धा मात्र है। जो पूर्व काल में वेद ज्ञान से शून्य किसी पौराणिक पण्डित ने भविष्य के विद्या-हीन ब्राह्मणों की उदरपूर्त्ति के लिए मनगढ़न्त लिखकर अपनी अज्ञता का परिचय दिया है।

अथ प्रथमोऽध्यायः

व्यास उवाच—**एकदा नैमिषारण्ये ऋषयः शौनकादयः।**
पप्रच्छुः मुनयः सर्वे सूतं पौराणिकं खलु॥

प्रसंग—व्यास जी ने कहा—एक समय नैमिषारण्य तीर्थ में शौनकादि ८८ हजार ऋषियों ने पुराणों के ज्ञाता सूत जी से पूछा :—

प्रश्न—कथा के प्रसंग में यह नहीं बताया कि व्यास जी ने किससे कहा? नैमिषारण्य तीर्थ कहाँ पर स्थित है? ८८ हजार ऋषि कौन थे, कहाँ से आये? सूतजी कौन थे? सूत जाति की उत्पत्ति एवं उसका व्यवसाय क्या है? इत्यादि बातों के बिना बताये कथा अधूरी मानी जाती है।[1]

प्रसंग—आगे चौथे श्लोक में कहा है कि नारद जी अनेक लोकों में घूमते हुये मर्त्यलोक में आये और यहाँ पाप से पीड़ित लोगों को देख कर उन्हें दया आई।

प्रश्न—पृथ्वी पर जहाँ तक मनुष्य बसे हैं वा बस सकते हैं, वह मर्त्यलोक कहलाता है। तब वे कौन-कौन से लोक वा देश थे, जहाँ-जहाँ घूमकर नारद जी इस मर्त्यलोक में आये? क्या वे लोक आकाश में स्थित हैं। क्या उससे पूर्व नारद जी

---

१. यह सब कुछ हम अपनी वेद कथा में श्रोताओं को बताते हैं। हमने इसी प्रसंग को लेकर अपनी कथा का आरम्भ किया है जिसमें भिन्न-भिन्न उदाहरण दिये जाते हैं। —लेखक

कभी मर्त्यलोक में नहीं आये ? क्या नारद जी के पंख लगे हुए थे वा हवाई जहाज से इतनी शीघ्र दूसरे स्थान पर पहुँच जाते थे ? इसका क्या समाधान है ?

वस्तुत: नारद जी तो ब्रह्मा के पुत्र योगी, तपस्वी और अध्यात्मज्ञानी थे। वे घूम-घूम कर लोगों को सत्यज्ञान का उपदेश देते थे। यही सन्तों का कार्य है।

छठे श्लोक में लिखा है कि संसार के दु:खी लोगों के दु:ख दूर करने का उपाय पूछने के लिये नारद जी विष्णु लोक में गये।

समीक्षा—"विष्लृ व्याप्तौ" इस धातु से व्यापक अर्थ में श्नु प्रत्यय लगा कर 'विष्णु' शब्द निष्पन्न होता है। व्यापक परमात्मा का नाम विष्णु है। वह कण-कण में व्याप्त है। एक देशी नहीं है। तब नारद जी कौन से विष्णुलोक में गये ? यदि वह मनुष्यवत् है तो परमात्मा नहीं हो सकता। ब्रह्मा की तरह विष्णु भी एक ऋषि था। उसके पास नारद जी जा सकते हैं। हाँ, व्यापक अर्थ में यह घटता है कि नारद जी ध्यानावस्थित होकर बैठ गये और हृदय में स्थित परमात्मा से मनुष्यों के दु:खों का उपाय पूछा।

योगी लोग इस प्रकार परमात्मा से वार्तालाप कर लेते हैं।

श्लोक १० में विष्णु नारद से कहते हैं कि आप मेरे पास क्यों आये हो ?

समीक्षा—जब भगवान् सबके हृदय की बात पहले से ही जानते हैं, तो नारद से ऐसा क्यों पूछते हैं ? इससे स्पष्ट हो गया कि विष्णु एक मनुष्य ही था। जो कहीं एक ठिकाने रहता था और जिसे नारद के आने का कारण ज्ञात नहीं था। इसीलिये नारद से पूछना पड़ा।

श्लोक १४, १५ में विष्णु ने नारद को बताया कि सत्यनारायण के व्रत को विधिपूर्वक करके मनुष्य मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

समीक्षा—कथाकार का सम्बन्ध विष्णु नामक ऋषि से है, व्यापक परमात्मा से नहीं। क्योंकि, जहाँ व्रत का विधान लिखा है, वहाँ बताया गया है कि विष्णु भगवान् के लिये केले के फल, गेहूँ, चावल का आटा, मिष्टान्न आदि पदार्थ भेंट करना चाहिये। इन पदार्थों का भोक्ता साकार विष्णु हो सकता है। निराकार से कोई सम्बन्ध नहीं। परन्तु यहाँ साकार विष्णु भी नहीं है, जो उन पदार्थों को भोगे। हाँ, पोप जी के पेट में वे पदार्थ अवश्य जाते हैं। यदि शरीर धारी विष्णु ही परमात्मा होते तो वह नारद से यों कहते कि लोग मुझ परमात्मा के व्रत को करके दु:खों से तर जायेंगे।

दूसरी बात यह है कि इस कथा को स्कन्द पुराण से ली हुई बताते हैं। यह निश्चय है कि १८ पुराणों को बने एक सहस्र वर्ष से अधिक समय नहीं हुआ। तब प्रश्न होता है कि स्कन्दपुराण बनने से पूर्व सत्यनारायण कथा सुनने-सुनाने की प्रथा थी या नहीं ? यदि थी तो कौन सी कथा सुनी जाती थी और सत्ययुग में जब सब लोग सुखी थे। कथा सुनी जाती है दु:ख दूर करने के लिये। तब दु:ख न होने से कौन सी कथा और किस प्रयोजन के लिये सुनी जाती थी ? साथ ही पौराणिक पुरोहित यह भी बतावें कि विष्णु ने नारद को प्रथम यह व्रत का विधान किस युग में सुनाया ?

श्लोक २०, २१ में विष्णु ने व्रत के विधान में घृत, दुग्ध आदि पदार्थों से भगवान् का भोग लगाना कहा है।

समीक्षा—जब भोग पाने वाला चेतन कोई है ही नहीं तो भोग को खायेगा कौन ? मूर्ति तो जड़ है। जो कहो कि भगवान अदृश्य रूप से अवश्य खाते हैं तो भोग में से उतना कम हो जाना चाहिए। मूर्ति के माध्यम से पुरोहित आप ले जाते हैं। यदि मनुष्य की भाँति परमात्मा को भी अन्न वस्त्रादि की आवश्यकता है तो मनुष्य और परमात्मा में क्या अन्तर रहा ? जब कि परमात्मा क्षुधा-तृषा आदि से रहित अशरीरी है।

इसी व्रत के विधान में आगे विष्णु ने यह भी बताया है कि सायं समय सत्यनारायण का व्रत पूजन करे। यजमान रात्रि जागरण करता हुआ नाचे-गावे, कीर्तन करे।

समीक्षा—स्वास्थ्य की दृष्टि से आयुर्वेद का नियम है कि मनुष्य को समय पर ही खाना-पीना, सोना-जागना तथा अन्य कार्य करने चाहिये। अन्यथा हानि पहुँचती है। रात्रि को अधिक जागना और फिर नाचना-गाना प्रकृति नियम के विरुद्ध है। यदि इसे सत्य मानते हो तो आजकल इस पर सर्वत्र आचरण क्यों नहीं किया जाता ? रही कीर्तन की बात—सो भगवत् कथा के अन्दर ही भगवान् के गुण कर्मों का बखान हो जाता है। उस की कीर्ति गा दी तो कीर्तन हो गया। आजकल जो हरे रामा हरे कृष्णा का ऊँचे स्वर से कीर्तन किया जाता है, वह कोरा पाखण्ड और समय को नष्ट करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। न इसमें राम की कीर्ति की चर्चा है और न राम ने अपने को ही कहीं परमात्मा घोषित किया। सारी रामायण देख जाइये। तुलसी रामायण में—

कौशलेश दशरथ के जाये। हम पितु वचन मान वन आये ।।

इससे उनका मनुष्य होना स्वतः सिद्ध है[1]। राम-लक्ष्मण सीता आदि सभी प्रातः सायं सन्ध्योपासना किया करते थे।

अध्याय के अन्त में लिखा है कि विशेषकर कलियुग में दुःख दूर करने का यह कथा सुनना छोटा सा सरल उपाय है।

प्रथम तो इसमें वर्णित घटनायें ही अस्वाभाविक हैं। यदि कुछ क्षणों के लिये सत्य भी मान लें तो भी निश्चय हो गया कि ये कथा के माहात्म्य कलियुग के आदि की घटनायें मात्र हैं। जो आगे चलकर स्कन्द पुराण में जोड़ दी गई हैं। अन्य युगों में इसका नाम भी न था।

।। प्रथम अध्याय समाप्त ।।

---

१. आत्मानं मानुषं मन्ये (वाल्मीकि रामायण)

अथ द्वितीयोऽध्यायः

प्रसंग—**कश्चित् काशीपुरे रम्ये ह्यासीद्विप्रोऽतिनिर्धनः ।**
क्षुत्तृड्भ्यां व्याकुलो भूत्वा नित्यं बभ्राम भूतले ।।

काशीपुरी नगरी में शतानन्द नाम का कोई अत्यन्त निर्धन ब्राह्मण दुःखी होकर भिक्षावृत्ति से भूखा-प्यासा यत्र-तत्र भटकता था। तब ब्राह्मणों के प्यारे भगवान् को उसकी यह दशा देखकर बड़ी दया आई। वे बूढे ब्राह्मण के वेष में आकर उससे पूछने लगे—हे ब्राह्मण ! तुम इतने दुःखी होकर इधर-उधर क्यों घूमते हो। इसका कारण बताओ।

समीक्षा—अपने-अपने कर्तव्य का पालन करने वाले तो ब्राह्मण ही क्या, क्षत्रिय आदि सभी भगवान् के प्यारे हैं। यहाँ ब्राह्मणों के प्यारे क्यों लिखा ? यह तो भगवान् पर पक्षपात का दोष आता है। जो ऐसा पक्षपाती है, वह भगवान् नहीं हो सकता, मनुष्य ही था। ये वचन उसी पोप ने लिख मारे हैं, जिसने यह कथा गढ़ी है। क्या विद्वान् ब्राह्मण का काम भिक्षा मांगना है ? यह तो आलसी, मूर्ख और निकम्मे लोगों का काम है। जो देश के लिये भार स्वरूप होकर भटकते फिरते हैं। दूसरी साफ बात तो यही है कि परमात्मा कभी मनुष्य नहीं बन सकता। क्योंकि—स पर्यगाच्छुक्रमकायमित्यादि वेद मन्त्रों से सिद्ध है कि वह निराकार, अजन्मा, सच्चिदानन्द आदि गुणों वाला है। ये गुण मनुष्य में नहीं घटते। कहाँ परमात्मा और कहाँ मनुष्य ? क्या एम. ए. पास व्यक्ति कक्षा १ में आना पसन्द करेगा ? यह तो अवतारवाद की ओट में पेटपालों का रचित षड्यन्त्र है। जिसमें भोली जनता को फँसा रखा है।

आगे लिखा है कि उस व्रत के प्रभाव से वह निर्धन ब्राह्मण धनवान् बन गया और हर महीने वह व्रत करने लगा। अन्त: में उसकी मुक्ति हो गई, इत्यादि।

समीक्षा—सारा संसार जर-जमीन-जोरू इन तीन वस्तुओं के आकर्षण में सदैव से रहा है और आगे भी रहेगा। इसलिये यहाँ पोपजी ने कथा के माध्यम से लोगों को सम्पत्ति का लोभ दिया है। क्यों कि, वह जानता था कि जिस काम के करने से कोई लाभ न हो, उसे कोई नहीं करना चाहता। और इस दृष्टान्त के प्रभाव से धन के इच्छुक यजमान व्रत कथा करावेंगे तो हमें उत्तम-उत्तम भोगों तथा धन की प्राप्ति होगी, जिससे हमारी जीविका चला करेगी। इनसे पूछना चाहिए कि कथा सुनने का धनी पुत्रवान बनने से क्या सम्बन्ध है ? कथा सुनने मात्र का यदि यह लाभ हो तो पोप जी धनवान् क्यों नहीं बन जाते ?

इति द्वितीयोऽध्यायः

अथ तृतीयोऽध्यायः

इस अध्याय में उल्कामुख राजा का अपनी पत्नी के साथ भद्रशीला नदी के किनारे कथा सुनना लिखा है।

यह भद्रशीला नदी कहाँ थी ? आजकल भी है वा समाप्त हो गई ? भारत के नक्शे में देखकर बताइये। उल्कामुख राजा किस वंश में उत्पन्न होकर कहाँ राज्य करता था। उसका भी परिचय देना चाहिये।

आगे साधु नाम का व्यापारी वैश्य आकर राजा से पूछता है कि इस कथा के सुनने का क्या फल है ? तब राजा ने बताया कि इस व्रत से सन्तान की इच्छा पूरी होती है। वैश्य भी निःसन्तान था। निदान उसने भी राजा से व्रत की विधि पूछ कर इसका निश्चय किया।

समीक्षा—इस प्रसंग में यह नहीं लिखा कि व्रत के प्रभाव से राजा के सन्तान हुई वा नहीं ? वस्तुतः सन्तान न होने का कारण राजा वा रानी को कोई गुप्त रोग होगा, जिसकी चिकित्सा उसने कराई होगी। दशरथ की भाँति पुत्रेष्टि यज्ञ किया होगा। केवल कथा सुनने से न कोई रोग जाता और न सन्तान होती है। वह तो आयुर्वेद के नियमानुसार वैज्ञानिक ढंग से ही हो सकती है। ऐसी दशा में आयुर्वेद की कथा सुननी चाहिये।

अधिकांश धनी व्यक्ति संतानहीन देखे जाते हैं। इसलिये कथाकार ने निःसन्तानों को सन्तान का लोभ दिखाकर कथा का माहात्म्य बताया है। यदि किसी ऐसे व्यक्ति की संयोग से इच्छापूर्ण हो भी जाती है तो पोप जी उसे कथा का प्रभाव बताकर उससे काफी धन प्राप्त करते हैं। कितने ही व्यक्ति कथा सुनते-सुनते मर गये। वे तो धन-सन्तान से वंचित ही रह गये।

उल्कामुख राजा की बताई विधि साधु वैश्य ने अपनी पत्नी को बताई और संकल्प किया कि सन्तान होने पर मैं भी व्रत कथा करूँगा। तब संकल्प मात्र से दस मास पश्चात् उसके घर एक कन्या का जन्म हुआ। वह कन्या चन्द्रमा की कला की तरह बढ़ने लगी। इसलिये उसका कलावती नाम रक्खा गया।

समीक्षा—इस प्रसंग से यह सिद्ध हुआ कि पूर्वकाल में आधुनिक फलित ज्योतिष के अनुसार नक्षत्रों के आधार पर नाम नहीं रक्खे जाते थे। केवल सुन्दर और सार्थक नाम रक्खे जाते थे। क्योंकि, कलावती का (क) अक्षर मृगशिरा नक्षत्र (वे वो क कि) का तृतीय अक्षर है। सो इसके आधार पर नाम नहीं रक्खा अपितु चन्द्र कला की भाँति बढ़ने के कारण ऐसा नाम रक्खा गया। वाल्मीकि रामायण से भी पता चलता है कि राम आदि चारों भाइयों के नाम भी नक्षत्र के आधार पर नहीं रक्खे गये। जैसे—

नक्षत्रेऽदिति दैवत्ये स्वोच्च संस्थेषु पञ्चसु।
गृहेषु कर्कटे लग्ने वाक्यता विन्दुना सह॥
कौशल्या जनयद्रामं दिव्यलक्षणसंयुतम्॥

पुनर्वसु नक्षत्र में जब कि पाँच ग्रह सूर्य, मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि अपने उच्च स्थान में स्थित थे, उस समय चन्द्रमा के साथ बृहस्पति के उदय होने पर कर्क लग्न में कौशल्या के गर्भ से राम उत्पन्न हुए।

पुष्ये जातस्तु भरतो मीनलग्ने प्रसन्नधीः।
सार्पे जातौ च सौमित्री कुलीरेऽभ्युदिते रवौ॥

भरत जी का जन्म पुष्य नक्षत्र में और मनि लग्न में हुआ। अश्लेषा नक्षत्र और कर्क लग्न में सूर्योदय होने पर लक्ष्मण और शत्रुघन का जन्म हुआ।

यहाँ विचारणीय है कि राम नाम का (र) अक्षर (पे पो र रि) चित्रा नक्षत्र का तृतीय चरण है। परन्तु, जन्म नक्षत्र (के को ह हि) पुनर्वसु इसमें (र) अक्षर का पता नहीं है। भरत का जन्म नक्षत्र पुष्य है, जिस के (हु हे हो हे) इन चरणों में (भ) अक्षर नहीं आया अपितु (ये यो भ मि) इस मूल नक्षत्र के चरणों में आता है।

इसी प्रकार लक्ष्मण और शत्रुघ्न आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न हुए। जिसके (डि डु डे डो) इन चरणों में इनके नाम का कोई अक्षर नहीं आता। अपितु अश्विनी (चु चे चो ल) तथा (गो स सि सु) शतभिषा इन नक्षत्रों में आता है। सो इनमें उनका जन्म नहीं हुआ।

अब श्री कृष्ण का नाम भी देखिये—भाद्रपद वदि ८ अष्टमी को रोहिणी नक्षत्र में उनका जन्म कंस की जेल मथुरा में हुआ। रोहिणी नक्षत्र के (ओ व वि वु) ये चरण हैं। इनमें श्री कृष्ण का (क) अक्षर नहीं आता, वह मृगशिरा नक्षत्र के (वे वो क कि) इन चरणों में आता है।

तब यह स्पष्ट हुआ कि नक्षत्रों के आधार पर नाम रखने की आधुनिक प्रणाली कल्पित एवं अवैदिक है। वस्तुतः पूर्वकाल में विचार कर सार्थक नाम रखते थे और तदनुकूल गुण कर्मों में ही बालक को ढालने का प्रयत्न करते थे।

पुनः आगे श्लोक १८-१९ का लेख है कि वैश्य साधु ने अपनी कलावती कन्या के वर खोजने के लिये एक दूत को कांचन नगर में भेजा और वह दूत किसी वैश्य के गुणवान् सुन्दर पुत्र को पकड़ कर ले आया। वैश्य ने उसी के साथ अपनी कन्या का विवाह विधि विधान से कर दिया।

समीक्षा—इस प्रसंग में कथाकार को साधु वैश्य तथा कांचन नगर का पूर्ण परिचय देना चाहिये था कि यह नगर कहां पर स्थित है! और विवाह करने का यह कौन सा ढंग है कि लड़के को पकड़ कर लड़की के घर दिखाने को लाया जाय? पूर्व काल में तो लड़कियाँ गुण कर्मानुसार स्वयं वर का चुनाव करती थीं। जैसे सावित्री ने सत्यवान् को, दमयन्ती ने नल को, संयोगिता ने पृथ्वीराज चुना को तथा रुक्मणी ने शिशुपाल को अयोग्य समझ कर श्रीकृष्ण को अपना वर चुना था। इत्यादि अनेक प्रमाण हैं। यदि लोकरीति भी देखी जाय तो भी यह रीति गलत है। लड़की के माता-पिता आदि अभिभावक जन ही अपनी कन्याओं के लिये योग्य वर चुनते हैं। पुनः पसन्द आने पर नियत तिथि में विवाह कर देते हैं। विदित होता है कि कथाकार ने भंग के नशे में ऐसा लिख मारा है।

इसी साधु वैश्य ने पूर्व प्रतिज्ञा की थी कि मेरे कोई सन्तान हो जायगी तो मैं सत्यनारायण का व्रत करूंगा। परन्तु दुर्भाग्य से न तो सन्तान होने पर व्रत किया और न पुत्री के विवाह के अवसर पर किया और अपने दामाद को साथ लेकर साधु वैश्य व्यापार करने समुद्र के किनारे रत्नसारपुर नाम के नगर में पहुँच गया। तब इस भ्रष्ट प्रतिज्ञा वाले साधु वैश्य से सत्यनारायण भगवान् अत्यन्त रुष्ट हो गये।

समीक्षा—समुद्र के किनारे बम्बई, मद्रास आदि नगर तो बसे हैं, परन्तु यह रत्नसारपुर नगर कहां पर स्थित है ? इसका स्पष्टीकरण होना चाहिए। शास्त्रों में क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेष ईश्वरः, यह लक्षण ईश्वर का लिखा है। अर्थात् अविद्या अस्मिता आदि पंचक्लेश, उनसे उत्पन्न कष्ट, कर्मफल भोग, ईर्षा-द्वेष, क्षुधा-तृषा, हर्ष शोक तथा क्रोधादि विकारों से रहित पुरुष को ईश्वर कहते हैं। वही ब्रह्मा आदि अनेकों नामों वाला है। तब यह कैसे हो सकता है कि भगवान् व्रत कथा न करने से रुष्ट हो गये ? यदि रुष्ट हो गया तो वह परमात्मा न था, कोई मनुष्य था। क्योंकि मनुष्य को ही क्रोधादि विकार सताते हैं। ऐसे भगवान् से तो दूर ही रहना चाहिये जो क्षण में रुष्ट और क्षण में प्रसन्न हो जाय। वह तो बड़ा खतरनाक भगवान् है। जिसको भूख-प्यास, निद्रा, थकावट क्रोधादि सताते हैं और जो स्वयं बन्धन में है वह अपने भक्तों को दुःखों से मुक्त कैसे कर सकता है। बुझा हुआ दीपक दूसरे दीपकों को प्रकाशित नहीं कर सकता।

जो व्यक्ति राज्य के कानून को भंग करता है, उसे राजा दण्ड तो देता है। परन्तु, कानून का पालन करने वालों को वह पारितोषिक नहीं देता। यही बात भगवान् की कथा के विषय में समझनी चाहिये। भगवान् की वेदवाणी ही उसकी कथा है। सभी मनुष्यों को चाहिए कि स्वयं पढ़ कर अथवा विद्वानों से सुनकर उन वेद के नियमों पर चल कर अपना जीवन बनायें। प्रथम ज्ञान पीछे कर्म यह नियम है। बिना ज्ञान के कर्म निष्फल है। वेद भगवान् का उपदेश एवं सृष्टि के लिये विधान है। उस पर न चलने से भगवान् दंड देगा, जो दुःख का कारण है। चलने पर निश्चित सुख मिलेगा। केवल ज्ञान को आचरण में लाने से मुक्ति मिलती है, सुनने मात्र से नहीं। दवा को गले में लटकाने से वा दवा का नाम सुनने से रोग दूर नहीं हो सकता, जब तक कि उसे सेवन न करें।

आगे श्लोक २५ में लिखा है—

भ्रष्टप्रतिज्ञामालोक्य शापं तस्मै प्रदत्तवान्।
दारुणं कठिनं चास्य महद्दुःखं भविष्यति ॥

जब भगवान् वैश्य से रुष्ट हो गये तो उस वैश्य के लिए श्राप दिया कि इस को बहुत दुःख प्राप्त होगा। फलतः रत्नसारपुर के राजा चन्द्रकेतु के यहां मिथ्या चोरी के आरोप में जेल गये और राजा ने उनका सारा धन भी चोरी का समझ कर छीन लिया।

समीक्षा—यह तो सत्य है कि मनुष्य को अपनी की हुई प्रतिज्ञा पूरी करनी चाहिए। किन्तु यदि वैश्य ने ऐसा नहीं किया तो उसी को जेल में जाना था, दामाद को नहीं, क्योंकि वह निरपराधी था। हाँ, यह ठीक है कि कई वार बुरों के साथ अच्छे व्यक्ति भी फँस जाते हैं। ऐसी दशा में भगवान् आकाशवाणी से वैश्य को सन्देश दे देते कि यदि तू मेरा व्रत नहीं करेगा तो बड़ा कष्ट भोगेगा। तब वैश्य जेल रूपी संकट से बच जाता।

क्या परमात्मा अपनी प्रशंसा कराने वा खुशामद का भूखा रहता है। जो एक वैश्य के पीछे हाथ धोकर पड़ गया ? प्रतिज्ञाभ्रष्ट तो आज भी लाखों व्यक्ति होंगे, उनके पीछे भगवान् अब क्यों नहीं पड़ता ? देखिये—

वस्तुतः सत्यनारायण-कथाकार बड़ा चालाक और अवसरवादी व्यक्ति था। उसने भोले लोगों को ठगने के लिए यह कथा उपन्यास की भांति मन गढ़न्त रच दी है। उसने सोचा था कि संसार में धन सन्तान के इच्छुक व्यक्ति ही अधिक हैं। इस कारण कथा में इनका प्रलोभन दिया है। अनेक प्रकार के भय तथा आपत्तियाँ दिखाई हैं। क्योंकि, जो यजमान कर्तव्य समझकर व्रत कथा न करायेगा तो लोभ वा भय से तो अवश्य करायेगा। ये ही दो कारण ऐसे हैं जिससे मनुष्य अपने धर्म से पतित हो जाते हैं। जिन्हें धर्म सम्बन्धी ज्ञान है, ईश्वर के न्याय पर अटल विश्वास है और कर्मफल के कायल हैं, वे कदापि पथभ्रष्ट नहीं होते।

अन्त के श्लोक ४० के लेख में यह है कि एक दिन राजा चन्द्रकेतु को भगवान् ने स्वप्न दिया कि प्रातःकाल ही इन दोनों वैश्यों को छोड़कर इनका छीना हुआ धन वापिस कर देना, अन्यथा तेरा राज्य धन पुत्रादि सहित सब नष्ट कर दूँगा।

समीक्षा—महाभारत में लिखा है कि राजा जरासन्ध ने अपने बल के अभिमान में आकर ८४ अन्य माण्डलिक राजाओं को अपने अधीन करके जेल में डाल रखा था। उसका विचार था कि पूरे सौ राजा इकट्ठे हो जाने पर इनकी बलि चढ़ाऊँगा। क्या वे सभी राजा अपराधी थे? जरासन्ध का चन्द्रकेतु राजा की तरह स्वप्न क्यों न दिया? बल्कि पौराणिक लोग जो श्रीकृष्ण को अज्ञानतावश परमात्मा समझते हैं, वे कृष्ण स्वयं भीम और अर्जुन को साथ लेकर वहाँ स्नातक वेश में गये और जरासन्ध का वध किया। यही बात यहाँ भी होनी चाहिए थी, सो नहीं हुई।

इस प्रकार की अनेकों घटनायें इतिहास में वर्णित हैं। आज के युग में क्या कुछ अपराध नहीं हो रहे? जिनके निवारण के लिए भगवान् ने अभी तक कोई प्रोग्राम नहीं बनाया?

तृतीयोऽध्यायः समाप्तः

अथ चतुर्थोऽध्यायः

अब जेल से छूटकर साधु वैश्य ब्राह्मणों को धन का दान करके अपने दामाद के सहित नाव में सामान लादकर अपने नगर को चलने लगा। त्यों ही सत्यनारायण भगवान् ने दण्डी साधु के वेष में आकर परीक्षा के तौर पर वैश्य से पूछा कि हे साधो! बता तेरी नाव में क्या सामान है? वैश्य ने झूठ बोलकर लता पत्रादि बता दिया और कहा कि जाओ तुम्हारे लिए देने को हमारे पास रुपया पैसा नहीं है दण्डी भगवान् ने श्राप दे दिया तो वैश्य की नाव में लता पत्रादि ही रह गये। धन आदि सब सामान लुप्त हो गया। पुनः वैश्य पछताता है और दण्डी की शरण में जाकर खुशामद करता है तो उसकी नाव पूर्ववत सामान से भर जाती है। भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं।

समीक्षा—यहाँ भी कथाकार ने ब्राह्मणों का ही पक्ष लिया है कि ब्राह्मणों को धन का दान दिया। परन्तु यह नहीं लिखा कि भूखे और निर्धनों को भोजन व धन का दान दिया। निर्धनों में ब्राह्मणादि सभी आ जाते हैं। किन्तु, उसे तो यही अभीष्ट

था कि सेठ लोग अन्यों को दान न देकर ब्राह्मणों को ही दिया करें। जिससे विना परिश्रम के हमारी उदरपूर्ति होती रहे। कथाकार का यह लेख अभी तक काम दे रहा है। धनपति ब्राह्मणों को ही दान देने में पुण्य समझते हैं। चाहे भले ही वे ब्राह्मण विद्याहीन, शराबी, भंगड़ी, तम्बाकू आदि नशा करने वाले धर्मभ्रष्ट हों। पोपों ने उन्हें भय दिखा दिया है कि दान के अधिकारी ब्राह्मण ही हैं, अन्य नहीं। परन्तु, पद्मपुराण इसका विरोध करता है—

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कुर्वन्ति ये नराः।
ते नरा नरकं यान्ति ब्राह्मणो ग्रामसूकरः॥

अर्थात् धूम्रपान करने वाले ब्राह्मण को दान देने वाले नर्क में जाते हैं और दान लेने वाला ब्राह्मण ग्राम का सूअर बनता है।

पुराण की इस व्यवस्था के अनुसार ऐसे ब्राह्मणों के सभी दानदाता घोर नर्क में अवश्य जायेंगे। नशा करने वाला ब्राह्मण सूअर बनकर विष्टाखाया करेगा और वह भंगी के यहां डन्डे की मार खाता हुआ कत्ल किया जायेगा। इससे यह भी निश्चय हो गया कि संसार में जितने भी सूअर हैं वा हुए हैं वे पूर्वजन्म में नशा करने वाले सभी ब्राह्मण थे। उन्हें अब मनुष्य जन्म पाना ही दुर्लभ है। उनका पतन अवश्यम्भावी है।

सच तो यह है कि इन सब बातों का पता न तो नामधारी पंडितों को है और न यजमान को। दोनों ही अविद्यारूपी अन्धकार में डूबे हुए हैं।

दूसरी बात चमत्कारवाद की जोड़कर भय का प्रदर्शन किया है। भगवान् ने श्राप भी दे दिया और 'क्षणे रुष्टः क्षण तुष्टः' के अनुसार वे खुशामद करने पर प्रसन्न भी शीघ्र हो गये! है न कोरा धोखा? प्रथम तो भगवान् का मनुष्य बनना ही असम्भव है और न इस दृष्टान्त से अवतारवाद की पुष्टि होती है। क्योंकि, पौराणिकों के विश्वास के अनुसार भगवान् तभी अवतार लेता है जब कि धर्म का नाश तथा अधर्म की वृद्धि होती है वा भक्तों पर संकट आता है। परन्तु यहां पर कोई भी कारण प्रतीत नहीं होता और हम पूछते हैं कि भगवान् साधारण मनुष्यों की ऐसी अस्वाभाविक परीक्षा क्यों लेता है? असंख्यों मनुष्य जगत् में ऐसे हुए हैं, आज भी हैं, जो बड़े-बड़े अभिमानी हैं। परमात्मा की सत्ता से इन्कार करने वाले करोड़ों कम्युनिस्ट नास्तिक भरे पड़े हैं। भगवान् उनकी परीक्षा लेकर उन्हें कष्ट क्यों नहीं देता? केवल उसी वैश्य के पीछे क्यों पड़ गये?

पुनः जब वैश्य पास में आकर रोने लगा तो दण्डी जी कहते हैं—हे दुष्ट बुद्धे! तूने मेरी पूजा नहीं की। अतएव मेरी आज्ञा से ही तुझे बार-बार दुःख मिला है।

वाह! क्या कहने पोप जी तुम्हारे? क्या भगवान् अपनी पूजा स्तुति का इतना भूखा है कि मनुष्य से कहकर करवाता है? तुलसीदास जी ने एक दोहा लिखा है जो अवतारवाद को प्रकट करता है—

तुलसी या संसार में सबसे मिलिये धाय।
ना जाने किस वेष में नारायण मिल जाय॥

भगवान् की प्राप्ति योग-साधन से होती है। पौराणिकों का भगवान् तो कच्छ-मच्छ और सूअर का भी अवतार लेता है। यदि इस वेष में किसी को भगवान् मिल भी गये तो कैसे पता चलेगा कि आज मुझे कच्छ मच्छ के रूप में भगवान् के दर्शन हो गये? ये समस्त बातें बेसिर पाँव की अवतारवादियों ने स्वार्थवश लिख मारी हैं।

दंडी भगवान् से आशीर्वाद पाकर जब वैश्य दामाद सहित नाव के द्वारा उस पार पहुँचा तो अपने आने की सूचना देने के लिए एक दूत को घर भेजा। दूत ने सन्देश दिया कि साहूकार ज़ी बहुत सा द्रव्य लेकर अपने बन्धुओं सहित नगर के निकट ही आ पहुंचे हैं। उस समय साहूकार वैश्य की पत्नी और पुत्री भगवान् की पूजा में लगी थीं। वैश्य की पत्नी दूत के मुख से पति के आगमन का शुभ सन्देश सुनकर शीघ्र ही पूजा समाप्त करके साहूकार के दर्शन के लिए चली गई। पीछे से उसकी पुत्री कलावती भी अपने पिता और पति के दर्शनार्थ बिना प्रसाद खाये वहाँ पहुँच गई। यहाँ भगवान् केवल प्रसाद न खाने से ही पुनः रुष्ट हो गये और कलावती के पति को जो नाव में से उतरा नहीं था, नाव सहित जल में डुबा देते हैं।

समीक्षा—अब विचारणीय बात यह है कि इस कथारूपी उपन्यास के बनाने वाला तो संसार में है नहीं; उसके बांचने वालों और सुनने वालों से ही पूछना चाहिए कि घर से तो वैश्य और उसका दामाद दो ही व्यापार करने गये थे। अब उधर से कौन से बांधवों सहित वापिस आ गये जो कहो कि बाँधवों सहित व्यापार करने गये थे तो वैश्य और दामाद के जेल में रहने के समय तक वे बांधव कहाँ रहे थे? उनकी तो पूर्व से ही कोई चर्चा नहीं है। देखो, हैं न प्रसंगविरुद्ध बातें।

कलावती ने जब वहां जाकर देखा कि उसका पति जल में डूब गया है तो उसको मरा जानकर वह भी जल में डूबकर सती होने को तैयार हो गई। इतने में ही भगवान् ने आकाशवाणी द्वारा समाचार दिया कि इसका पति प्रसाद न खाने के कारण जल में डूब गया है। यदि यह भगवान् का प्रसाद खाकर वापिस यहाँ आवेगी तो इसका पति जीवित होकर इसे अवश्य प्राप्त हो जायगा। आकाशवाणी सुनकर वैश्य पुत्री शीघ्र ही घर जाकर प्रसाद खाकर वापिस वहाँ पहुँची तो उसका पति नाव सहित जल के ऊपर आ गया और बच गया।

भला सोचने की बात है कि वैश्य का घर घटनास्थल से १-२ मील दूर तो होगा ही। कन्या को घर जाने आने में भी कुछ समय लगा होगा। इतनी देर तक उसका पति जल में डूबा रहा और मरा नहीं? जबकि प्रतिवर्ष बरसात के दिनों में गंगा आदि नदियों में बाढ़ आ जाने से कहीं न कहीं नाव डूब जाने के समाचार मिलते हैं। कितने ही व्यक्ति डूबकर मर जाते हैं। क्या वे सभी पापी होते हैं? आजकल कहीं डूबी हुई नाव उछलती हुई क्यों दिखाई नहीं देती? और आकाशवाणी रेडियो का नाम है: क्या भगवान् मनुष्य बनकर किसी रेडियो स्टेशन पर आकाश में रहता था अथवा उसने वैश्य की नाव डूबने के स्थान तक टेलीफोन लगा रखा था? यह समाचार तो भगवान् किसी भी वेष में आकर वैश्य को दे सकता था जैसा कि पहले दण्डी वेष में आकर पूछा कि तेरी नाव में क्या है? वह भगवान् था या औरंगजेब जैसा कोई खूँखार बादशाह था जो जरा सी बात पर रुष्ट होकर उसे इतना बड़ा दण्ड दिया और फिर उस पर भी तारीफ की बात तो यह हुई कि प्रसाद

खाते ही भोला भगवान् उस कन्या पर बहुत शीघ्र प्रसन्न भी हो गया और उसका पति बचा दिया।

दूसरी बात यहां पर यह भी विचारणीय है कि—

आसीतामरणात्क्षान्ता नियता ब्रह्मचारिणो।
यो धर्म एकपत्नीनां कांक्षन्ती तमनुत्तमम्॥

यह मनुस्मृति का लेख है कि धर्म की इच्छा रखती हुई विधवा मरणपर्यन्त नियत होकर ब्रह्मचर्य व्रत धारण करे और सती नारी मूल फल खाकर अपने शरीर को दुर्बल करे, ताकि कामदेव न सतावे। वहाँ कहीं नहीं लिखा कि पति के मरने पर अग्नि में जलकर वा जल में डूब कर सती हो जाना चाहिये। आत्मघाती को शास्त्रों में नरकगामी बताया है। यदि यह सतीप्रथा प्राचीन काल में भी होती तो दशरथ के मरने पर तीनों रानियाँ सती क्यों न हुयीं? बाली वा रावण आदि की पत्नियाँ जल कर भस्म क्यों न हुयीं?

वस्तुत: यह सती-प्रथा तो कलिकाल की देन थी, जो शास्त्रविरुद्ध थी। किन्तु कुछ समझदार महानुभावों ने इसे समाज का कलंक समझकर बन्द करा दिया। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह पौराणिक सत्यनारायण कथा सती प्रथा चलने के पश्चात् ही गढ़ी गई है। जिसका लेख व्यास जी के बनाये स्कन्दपुराण में बताया जाता है। परन्तु व्यास जी के समय द्वापर में सती प्रथा थी नहीं। तब यह संगति कैसे बैठ सकती है। सच तो यह है कि व्यास जी ने आधुनिक कोई भी पुराण बनाये ही नहीं हैं। यदि बनाये हैं तो सप्रमाण सिद्ध करके उनके ग्रंथों से सती प्रथा का कोई लेख दिखावें और साथ ही यह भी उत्तर दें कि जब तक व्यास जी ने स्कन्दपुराण नहीं रचा था तो उससे पूर्व कौन-सी कथा सुनी जाती थी।

चौथा अध्याय समाप्त

अथ पंचमोऽध्याय:

इस अध्याय में प्रसाद का माहात्म्य खूब बढ़ा चढ़ाकर लिखा है। बताया जाता है कि एक तुंगध्वज नाम के राजा ने सत्यनारायण का प्रसाद छोड़ा था। जो ग्वाले लोगों ने पास बैठे हुए राजा को दिया था। किन्तु राजा उसे वहीं छोड़कर घर चला गया। इसी बात पर सत्यनारायण ने रुष्ट होकर धन आदि सहित उसके सौ पुत्रों को मार दिया। राजा ने इस दुर्घटना का कारण प्रसाद का त्यागना समझकर स्वयं ग्वालों को साथ लेकर कथा सुनी और प्रसाद खाकर भगवान् से क्षमायाचना की। तब भगवान् ने प्रसन्न होकर उसके सौ पुत्रों को जीवित कर दिया।

समीक्षा—आधुनिक पौराणिक पंडित शूद्रों के हाथ का छुआ अन्न सेवन करना निषेध मानते हैं और शूद्रों को वेद पढ़ना सुनना भी पाप समझते हैं। यदि यह बात सत्य होती तो ग्वाले जो कि शूद्र ही थे उनका छुआ प्रसाद कथावाचक पंडित ने क्यों खाया और उनके सामने वेद मन्त्रों का उच्चारण भी क्यों किया? जबकि

शंकराचार्य जी ने व्यवस्था दे दी कि यदि शूद्र वेद मन्त्र सुने तो उसके कानों में शीशा भर देना चाहिए। वह मन्त्रोच्चारण करे तो जिह्वा काट लेनी चाहिए। तब आजकल नामधारी सनातनी पंडित कथावाचक शूद्रों के हाथ का भोजन क्यों करते हैं और क्यों उनके समक्ष वेद मन्त्र बोलते हैं? यह अपराध तो तथाकथित सनातनी पंडितों का ही है। इसका कारण लोभ तथा स्वार्थ के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? इसके विपरीत शंकराचार्य जी यह लिखना भूल गये कि जो ब्राह्मण स्वार्थवश शूद्रों का भोजन करे और उन्हें वेद मन्त्र सुनावे तो उसकी भी जिह्वा काट लेनी चाहिये। यहाँ पर उन्होंने विषमता उत्पन्न कर दी। यहाँ सत्यनारायण कथा से ही सिद्ध है कि शूद्रों को भी वेद मन्त्र सुनने व पढ़ने का अधिकार है। जैसा कि—'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य." इत्यादि मन्त्र का आदेश है। पवित्र सदाचारी शूद्र के हाथ का भोजन करने में कोई दोष नहीं है। यही आर्य लोगों की मान्यता है।

अब सौ पुत्रों के मरने की बात भी सुनिये—ऐसे तो आजकल भी बहुत से मनुष्य प्रसाद नहीं लेते। उनके पुत्र आदि नष्ट क्यों नहीं होते? यहाँ पोप जी ने बड़ी चतुराई से काम लिया है। लोगों को केवल भय दिखाया है कि कथा के बीच में से कोई उठकर न जावे। जो न जावेगा तो कुछ न कुछ पैसे आरती में अवश्य ही चढ़ावेगा। अन्यथा हमारी आर्थिक हानि होगी। इसीलिए प्रसाद का माहात्म्य लिख दिया।

कथावाचकों से पूछना चाहिए कि पुत्रों के मरने के पश्चात् राजा ने कथा सुनी तो इसमें भी समय लगा होगा। क्या तब तक उसके सौ पुत्र मरे पड़े रहे? जबकि मरते ही शमशान भूमि में लेजाकर जला देते हैं। जीव शरीर से निकल जाता है तो वापिस नहीं आता। फिर कथा सुनने और प्रसाद खाने मात्र से पुत्र जीवित कैसे हो गये?

ईसाई लोगों की बाईबल का भी यही लेख है कि ईसा को फाँसी लगी और उसके शिष्यों ने उसे जमीन में दफना दिया। किन्तु तीसरे दिन ईसा जीवित होकर आकाश को उड़ गये। तब तो उनकी बात भी सत्य ठहरती है। स्वार्थी लोगों ने अपनी प्रतिष्ठा एवं पेट पूजा के लिए ऐसे-ऐसे मिथ्या चमत्कार जोड़ दिए हैं।

आगे कथा के माहात्म्य में लिखा है कि जो मनुष्य इस कथा को सुनता है उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। उसे सब प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं और वह सभी बन्धनों व भय से मुक्त हो जाता है।

समीक्षा—कथा सुनने मात्र से कुछ भी नहीं होता। जब तक कि सत्यमार्ग का अनुसरण व आचरण न करें। यही तो कारण है कि आज तक जितने भी लोगों ने भगवत्कथा सुनी, वे उस पर आचरण न करने से बन्धन तथा भय से मुक्त नहीं हो सके। अपितु और भी अधिक कष्टों में फंसे हैं। परन्तु जो धनी हुए हैं वे कथा सुनने से नहीं, बल्कि अपने व्यापार में परिश्रम करने से हुये हैं। क्या अमेरिका जो संसार में सर्वाधिक वैभवशाली देश माना जाता है, उसका कारण आपका यह व्रत है वा उनका दिन रात का परिश्रम है? कथाकार ने तो ऐसा लिखकर लोगों को निकम्मा और आलसी बनने का मार्ग दिखाया है, जैसे मलूकदास ने कहा—

अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गये सबके दाता राम॥

इनके इस वचन ने तो वेद के "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँसमा:" इस मन्त्र पर पानी ही फेर दिया। वेद कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने का आदेश देता है। किन्तु, कथाकार केवल कथा सुनने मात्र से ही सारी इच्छायें पूर्ण कराने का लोभ देता है। यदि इस बात पर उन्हें विश्वास है, तो कथावाचक लोग अपने घर व्रत कथा द्वारा धनाढ्य क्यों नहीं हो जाते? वे क्यों चन्द पैसों के लिए यजमान का द्वार खटखटाते हैं। देखा जाय तो ये ही लोग अधिक दुःखी और दरिद्री दिखाई देते हैं। यदि पुरोहित लोग यजमानों को न बहका कर स्वयं विद्वान् बन तथा यजमान को सत्यमार्ग दिखावें तो ज्ञान-विज्ञान की कितनी उन्नति होवे। आश्चर्य तो इस बात का है कि बाल की खाल निकालने वाले वकील बड़े-बड़े बुद्धिमान् वैज्ञानिक व्यक्ति भी इस मिथ्या माहात्म्य में विश्वास किये बैठे हैं। उन्होंने कभी भी इसकी अवैज्ञानिकता पर ध्यान नहीं दिया।

आगे इसी पंचम अध्याय में उन लोगों के अग्रिम जन्म का वृत्तान्त लिखा है, जो पहले इस व्रत कथा को सुन चुके थे। जैसे—

शतानन्दो महाप्राज्ञः सुदामा ब्राह्मणो ह्यभूत्।
तस्मिन्जन्मनि श्रीकृष्णं ध्यात्वा मोक्षमवाप ह॥
काष्ठभारवहो भिल्लो गुहो राजा बभूव ह।
तस्मिन्जन्मनि श्रीरामं सेव्य मोक्षं जगाम वै॥

इत्यादि श्लोक लिखे हैं। इसका अर्थ है कि काशीपुर निवासी शतानन्द नाम का ब्राह्मण इस कथा के प्रभाव से अग्रिम जन्म में सुदामा नाम का ब्राह्मण हुआ। जो श्रीकृष्ण का ध्यान करके मुक्ति को प्राप्त हुआ। तथा लकड़हारा द्वितीय जन्म में श्रीराम के समय राजा गुह हुआ। वह भी श्रीराम की सेवा करके संसार से तर गया।

समीक्षा—अब इसकी सत्यता पर जरा ध्यान दीजियेगा—कलियुग की आयु चार लाख बत्तीस हजार वर्ष तथा द्वापर की आठ लाख चोंसठ हजार वर्ष की आयु है। सुदामा श्रीकृष्ण का समकालीन द्वापर युगीन व्यक्ति था, जो पूर्व जन्म में शतानन्द नाम का ब्राह्मण लिखा है। यह कथा सुनकर भी दोनों जन्मों में निर्धन ही बना रहा। इसका अर्थ यह हुआ कि शतानन्द और सुदामा दोनों ही द्वापर युग के व्यक्ति थे। अब तो इसमें कुछ भी शंका नहीं रही कि वर्तमान सत्यनारायण कथा कलियुग में ही लिखी गई है। जिसमें द्वापर की अतीत घटनायें वर्णित हैं। दूसरा व्यक्ति लकड़हारा था, जिसने शतानन्द ब्राह्मण से ही व्रत कथा का प्रभाव सुना था। तब तो लकड़हारा भी द्वापर युग का व्यक्ति सिद्ध हुआ। इसने त्रेतायुग में गुह नाम से जन्म लिया जो श्रीराम का समकालीन था। द्वापर से पूर्व त्रेतायुग बीत चुका था, जिसके बारह लाख छियानवे हजार वर्ष होते हैं। तब क्या द्वापर युग का लकड़हारा द्वापर में ही जन्म लेगा वा उल्टा त्रेता युग में? और यदि त्रेतायुग को द्वापर के पश्चात् गिनें, तो भी यह ऐतिहासिक दृष्टि से गलत ठहरता है। यहाँ प्रश्न उठता है कि जब जीव मृत्यु के तुरन्त पश्चात् अथवा बहुत थोड़े समय में ही पुनर्जन्म प्राप्त करता है तो द्वापर के लकड़हारे का जीवात्मा त्रेता में गुह के जन्म होने तक कहाँ ठहरा रहा? उसने लाखों वर्षों तक जन्म क्यों नहीं लिया? यदि कहो कि उसकी मुक्ति हो गई

थी और वह इतने वर्षों तक मुक्ति में रहा, तो भी गलत है। क्योंकि मुक्ति की अवधि शास्त्रानुसार—३१, १०, ४०,०००००००० वर्ष की बताई जाती है। पश्चात् मुक्त जीव संसार में पुन: किसी महान् आत्मा के रूप में जन्म ग्रहण करता है और पौराणिक मुक्ति को सादि-अनन्त मानते हैं कि मुक्ति के पश्चात् जीव पुनर्जन्म नहीं लेता। तो लकड़हारे की मुक्त आत्मा ने गुह के रूप में फिर जन्म क्यों लिया? इसका सीधा अर्थ यह है कि लकड़हारा मुक्त हुआ ही नहीं और लाखों वर्षों के पश्चात् यह पता भी कैसे लगा कि यह उसी ने जन्म लिया है, इसमें प्रमाण क्या है?

इसी प्रकार राजा तुंगध्वज, उल्कामुख तथा साधु वैश्य के पुनर्जन्म की असम्भव गाथायें लिख मारी हैं। जिनमें चमत्कारवाद के अतिरिक्त सत्य कुछ नहीं है।

प्रिय पाठको! इन मिथ्या कथाओं को सुनते-सुनाते सदियाँ बीत गई और अब इस विज्ञान के युग में जबकि महर्षि दयानन्द ने सर्वत्र वेदों का प्रकाश फैला दिया है, पहले जैसा अंधकार नहीं रहा। अब तो इन चमत्कारवादियों के चंगुल से निकलकर वेद की शरण में आ जाओ। तभी आपका कल्याण होगा। अब बुद्धि से सोचने का समय आ गया है। अंधविश्वास को त्याग कर वेद के सत्यमार्ग का अनुसरण करना सीखो। जैसे एक पंख से पक्षी नहीं उड़ सकता और एक पहिये की गाड़ी नहीं चल सकती, वैसे ही ज्ञान और कर्म रूपी दोनों पहियों से जीवन की गाड़ी चलती है, एक से नहीं चलती।

यदि आप सच्ची सत्यनारायण कथा सुनना चाहते हैं तो आर्य विद्वानों को बुला कर सुनिये। जिसको सुनने तथा आचरण करने से निश्चय ही भवबन्धन कट जाते हैं। सारे संशय दूर हो जाते हैं। यदि श्रद्धालु पाठकों ने इस लेख को पसन्द किया तो मैं शीघ्र ही सरल भाषा में दूसरा लेख 'वैदिक सत्यनारायण कथा' आपकी भेंट करूंगा। इसकी सफलता आपके सहयोग पर ही निर्भर है।

अंत में हमारा विश्वास है कि कोई भी पौराणिक जगत् का विद्वान् हमारी इन वैदिक मान्यताओं का खण्डन करके वर्तमान सत्यनारायण कथा को सप्रमाण सत्य सिद्ध नहीं कर सकता। इसके लिये लेखक हर समय तैयार है। □